Chapter-8

अष्टम अध्याय

इतर निबद्ध काव्य

पूर्ववर्ती विवेचन में निर्दिष्ट किया जा चुका है कि इतर कविताएँ मुक्तकों से भिन्न होने के साथ-साथ कुछ ऐसी विशेषताओं को लिए हुए है जिन पर खण्डकाव्यों के साथ न लेकर स्वतंत्र रूप से विचार करना अधिक उचित प्रतीत होता है । वैसा इन रचनाओं को एक प्रकार से खण्डकाव्य ही कहा जायगा. ऐसी रचनाओं को या तो विचार-सूत्र को आधार बनाकर निबद्ध किया गया है अथवा कथा के सूत्र को. इसमें संदेह नहीं कि ये प्रबंध काव्य की व्यापक अवधारणा की कोटि में आती हैं, किन्तु इनकी कुछ ऐसी विशेषता है, जिसके कारण इनके स्वतंत्र रूप से अनुशीलन द्वारा इन्हें समुचित न्याय दिया जा सकता है. उपर्युक्त विशेषताओं को दृष्टिगत करके वर्गीकरण करके इन्हें इस प्रकार रखा जा सकता है ---

(क) आख्यान निबद्ध रचनाएँ

पेशोला की प्रतिध्वनि, प्रलय की छाया, नकली किला, महान प्रतिशोध, सरदार चूड़ावत, कर्ण एवं कुन्ती.

(ख) विचार सूत्र प्रधान रचनाएँ

शेर सिंह का शस्त्र समर्पण, शिवाजी का पत्र, पृथ्वीराज का पत्र, जागो फिर एक बार, परशुराम की प्रतीक्षा, बेतवा का सत्याग्रह.

विचार सूत्र प्रधान रचनाओं में किसी न किसी ऐतिहासिक घटना का संकेत अवश्य मिलता है, किन्तु उनकी मूल चेतना कवि के चिन्तन से सम्बद्ध है. ऐसे चिन्तन में एक सूत्रता के साथ-साथ सोद्देश्यता भी है. ये दो प्रकार की हैं जिनमें से एक का परिवेश पूर्णतया अतीत का है. दूसरे प्रकार की वे रचनायें हैं जहाँ ऐतिहासिक संदर्भ को सम्पूर्णतया वर्तमान चिन्तन से अनुप्राणित किया गया है. आख्यान निबद्ध कविताओं में कथा या घटना का सूत्र स्पष्ट है, यद्यपि सामान्य

कथा-काव्य की भाँति कथा मात्र का आकलन इनका उद्देश्य नहीं जान पड़ता. अतः इन दोनों प्रकार की रचनाओं पर क्रमशः विचार किया जा रहा है ।

(क) आख्यान निबद्ध रचनाएँ

उपर्युक्त विवरण से प्रकट हैं कि इस कोटि में आने वाली रचनाएँ क्रमशः " पेशोला की प्रतिध्वनि ", " प्रलय की छाया ", " नकली किला ", " महान प्रतिशोध ", " सरदार चूड़ावत ", तथा " कर्ण एवं कुन्ती " हैं. इनमें से प्रथम दो जयशंकर प्रसाद कृत, अंतिम दो पं० सोहनलाल द्विवेदी कृत हैं. " नकली किला " के रचयिता मैथीलिशरण गुप्त एवं " महान प्रतिशोध " के रचयिता कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह हैं ।

पेशोला एक ऐतिहासिक झील है जिसके किनारे राणा प्रताप ने अपनी अन्तिम श्वासें छोड़ी थीं. प्रसाद जी ने " पेशोला की प्रतिध्वनि " के माध्यम से मेवाड़ के प्राचीन गौरव का स्तवन किया है और साथ ही वर्तमान शोचनीय स्थिति से मुक्त होने का संदेश भी दिया गया है. इस मुक्ति संदेश में कवि वीरवृत्ति को जगाने का आकांक्षी है. जिस पेशोला का तट एवं तटवर्ती प्रदेश महाराणा के शौर्य एवं पराक्रम से गूंजता था, उससे एक प्रतिध्वनि सी उठकर रह जाती है. जीवन पर्यन्त स्वतंत्रता के लिए सतत युद्ध करने वाले राणा प्रताप अपने अंतिम क्षणों इस दुश्चिन्ता में पड़े हैं कि इस महान उत्तरदायित्व का भार कौन उठायेगा --

" कौन लेगा भार यह ?
कौन विचलेगा नहीं ?

दुर्बलता इस अस्थिमांस की-
ठोंक कर लोहे से, परख का वज्र से,
प्रलयोल्का-खण्ड के निकस पर कस कर
चूर्ण अस्थि-पुंज-सा हँसेगा अट्टहास कौन ,"[1]

इसमें ओज और दीप्ति के साथ मेवाड़ की सम्पूर्ण मुक्ति के लिए युद्ध का आह्वान है. गौरवपूर्ण वीरहप्त अतीत का एक शब्द चित्र उपस्थित करके कवि मानो अपने समय की नयी पीढ़ी को जागृति का संदेश देना चाहता है. इस प्रकार पूरी कविता वीर रस की संक्षिप्त किन्तु सशक्त अभिव्यक्ति का साक्ष्य उपस्थित करती है. कथन में ध्वन्यात्मकता का गुण पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है. छन्द बन्ध के दृष्टिकोण से यह अतुकान्त रचना है किन्तु शब्दों एवं रचना के माध्यम से अद्भुत नाद-सौन्दर्य उत्पन्न किया गया है. बीच- बीच में तत्सम एवं उद्घोषक शब्द प्रयोग वीर रस के अनुरूप शिल्प-पक्ष को उजागर करता है.

" प्रलय की छाया " का प्रारंभ कवि ने पूर्व दीप्ति (Flash back) पद्धति से किया है . गुर्जरेश्वर कर्णदेव की पत्नी कमला के मानस पटल पर अतीत की स्मृतियाँ एक-एक कर अंकित होती चलती हैं. यौवन के ढलते प्रहारों में उसे अपने जीवन के प्रभात का स्मरण हो आता है. जब वह अपने रूप यौवन और विलास में कस्तूरी मृग के सदृश आत्मलीन थी. वह अपनी अप्रतिम रूपराशी द्वारा गुर्जराधिपति कर्णदेव को अपने संकेतों पर नचाती थी. राजा सर्वस्व उस पर लुटा बैठे थे. एक दिन अचानक समाचार मिला कि अल्लाउद्दीन की पाशविकता से बचने के लिए रानी पद्मिनी ने जौहर रचकर प्राण दे दिये. इस समाचार की अनोखी प्रतिक्रिया उस पर हुई. शोक और सहानुभूति के स्थान पर उसमें स्पर्धा जाग उठी ।[2]

अपने रूप गौरव में इठलाती हुई कमला ने पति को बाध्य किया

कि वह गुजरात को स्वतंत्र घोषित कर दे, ऐसा कदम उठाते ही सुलतान गुजरात पर चढ़ आया. कर्णदेव पराजित हुआ और कमला बन्दिनी बना कर दिल्ली भेज दी गयी. उस रूप गर्विता को अपने रूप लावण्य पर भरोसा था, वह सुलतान के हृदय में अपने रूप की ज्वाला जलाकर उसे संतप्त कर पति का प्रतिशोध लेना चाहती थी किन्तु एक दिन जब सुलतान की दासियाँ उसे सुलतान के सम्मुख ले गयी और दरबारी मान मर्यादा की रक्षा के लिए घुटनों के बल झुकाना चाहा तो उसने वस्त्रों में छिपी कटार निकाल कर आत्महत्या करनी चाही परन्तु सुलतान ने उसे ऐसा न करने दिया. सुलतान की अनुपम विनय भरी वाणी ने, उसकी वाक्पटुता और चाटुकारिता ने इसे रूप गर्विता नारी को पराजित कर दिया. फिर उसकी प्रार्थना पर उसके बाल सहचर मानिक को प्राण दान देने की घटना ने तो उसे बिलकुल ही अभिभूत कर दिया. इस घटना ने उसमें लालसाएँ एवं वासनाएँ और पल्लवित कर दीं. वह अब भारतेश्वरी बनने के स्वप्नों में डूबने उतराने लगी. उसने अपने पति के संदेश तक को ठुकरा दिया. वह विजयी हुई, भारतेश्वरी बनी परन्तु उसका यह सुख स्थायी न रह सका. मानिक अलाउद्दीन की हत्या कर खुसरो नाम से शासक बन बैठा. उसका हृदय उसे कचोटने लगा कि जो कार्य वह न कर सकी, वह उसके एक अकिंचन भृत्य ने कर दिखाया और तिसपर भी जब एक दिन मानिक ने उसकी भर्त्सना की तो वह सिहर उठी ।

" प्रलय की छाया " की कथावस्तु का आधार ऐतिहासिक है.[3] परन्तु कवि ने अपनी कल्पना द्वारा कथावस्तु में यत्किंचित परिवर्तन किया है. यह ऐतिहासिक तथ्य है कि 1597 ई0 में अलाउद्दीन ने गुजरात को जीता था और राजा कर्णदेव को अपनी पुत्री देवल देवी के साथ दक्षिण की ओर भागना पड़ा था और रानी बन्दिनी होकर अल्लाउद्दीन के हरम की शोभा बढ़ा रही थी. मानिक की

घटना काल्पनिक लगती है क्योंकि वह कमला का बाल सहचर रह चुका था और उसने सुलतान को मारा था जबकि वह गुलाम खरीदा गया था. पद्मिनी और कमला की ऐतिहासिक घटना में अन्तर है जो यहाँ भ्रान्ति उत्पन्न करती है परन्तु फिर भी कथा में प्रवाह है. " प्रलय की छाया " यद्यपि मुख्यत: नारी सौन्दर्य एवं नारी हृदय के विविध भावों का वर्णन विश्लेषण करने वाली रचना है, तथापि पृष्ठ-भूमि पर भारत के अतीत गौरव की प्रतिष्ठा कर राष्ट्रीय भाव जगाने का प्रयत्न भी किया गया है. अलाउद्दीन के मुख से हिन्दू नारी के आत्म त्याग और बलिदान की प्रशंसा इसी उद्देश्य से करायी गयी है. इसमें बीच- बीच में वीरोल्लास भरी उक्तियाँ आती हैं, जो काव्य में ओज एवं उदात्ततर का समावेश करती हैं. " पेशोला की प्रतिध्वनि " की तरह ही इसमें भी कवि नयी पीढ़ी को जागृति का संदेश देना चाहता है. इसमें कथन में ध्वन्यात्मकता का गुण तत्सम पदावली के माध्यम से नाद- सौन्दर्य उत्पन्न किया गया है ।

" नकली किला " मैथिलीशरण गुप्त का मौलिक प्रयास है. आज से लगभग 50 वर्ष पूर्व खड़ी बोली का कोई स्थिर रूप नहीं था और वह काव्योपयोगी नहीं समझी जाती थी और वास्तव में भी नहीं, उस समय युवक कवि मैथिलीशरण गुप्त ने एक ऐतिहासिक घटना को लेकर " नकली किला " जैसे रोचक काव्य की रचना खड़ी बोली में ही की और यह सिद्ध किया कि खड़ी बोली गद्य के ही नहीं पद्य के भी उपयुक्त है और उसमें भी सरस एवं कलापूर्ण काव्य की रचना हो सकती है ।

यह घटना प्रधान काव्य/ऐतिहासिक कलेवर में प्रस्तुत किया गया है. बूंदी और चित्तौड़ नरेश की घटना को काव्य का विषय बनाया गया है. बूंदी नरेश वीरसिंह तथा उसका अनुज लालसिंह अपनी पुत्री

का पाणिग्रहण संस्कार चित्तौड़ नरेश खेतलसिंह के साथ करने का निश्चय करते हैं. विवाह सम्पन्न होने के उपरान्त वरपक्षीय राजकवि अपने राजा की अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशस्ति करता है जो लालसिंह को अच्छी नहीं लगती. राजकवि अपने कृत्य पर ग्लानि अनुभव करता है और आत्महत्या कर लेता है. विवाह की शहनाईयाँ युद्ध भेरियों में परिवर्तित हो जाती हैं, घमासान युद्ध होता है और वर बारात के साथ ही मारा जाता है. क्षत्रिय कुमारी जिसने अपने पति के दर्शन तक नहीं किए थे, मृत्यु की शरण लेती है ।

इसी घटना के उपरान्त काव्य का उत्तरार्द्ध प्रारंभ होता है. इसमें चित्तौड़ नरेश लाखा अपने पूर्वजों के वैर-प्रतिशोध की कामना से बूंदी के दुर्ग को तोड़ने की प्रतिज्ञा करता है. उसके हठ को देखकर बूंदी का कृत्रिम दुर्ग बनाया जाता है. बूंदी निवासी कुंभ जो लाखा के यहाँ रहता है इस अपमान को सह नहीं सकता वह अपनी जन्मभूमि के स्वाभिमान के लिए अपने प्राणों की आहुति दे देता है. काव्य के प्रारंभ से अंत तक रोचकता के अतिरिक्त कथा का संबंध निर्वाह भी अच्छा है. कथानक अपने संदेशवाहन में सर्वथा समर्थ हैं. यद्यपि अधिकांशतः अभिधा का प्रयोग हुआ है. तथा अलंकार भी सामान्य है तथापि प्रस्तुत काव्य में गति चित्र के अच्छे उदाहरण भी मिल जाते हैं. वीरोचित उक्तियाँ, ओज एवं उत्साह का पर्याप्त वर्णन हुआ है. इसमें नाद- सौन्दर्य उत्पन्न करने का भी कवि ने सफल प्रयास किया है ।

कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह रचित " महान प्रतिशोध " शीर्षक कविता की कथा महाभारत से ग्रहीत है. इसमें द्रौपदी के चीर हरण की कथा को दर्शाया गया है. युधिष्ठिर द्वारा जुए में सब कुछ हारने पर कुरुपति दुर्योधन की आज्ञा से दुःशासन द्रौपदी को बालों से पकड़ कर महल से रंगभूमि में ले आता है. वह मारे लज्जा के धरती में

गड़ती जाती है, उस समय कुरुपति अट्टहास करता हुआ पांचाली से कहता है कि लज्जा का अभिनय करना बंद करो एवं अपने उस की ओर संकेत करता हुआ कहता है कि इसे अब सनाथ करो. यह सुनकर भीम क्रोध में आ जाता है और अपनी ओज भरी वाणी में कुरु कुल के बालक, युवक एवं वृद्धों को ललकार कर कहते हैं कि जिन आंखों से तुम लोगों ने कृष्णा अपमान सहा है उन सबों की आंखे शर वर्षा से बुझ जायेंगी और मेरी यह गदा तुम सब को मृत्यु की शय्या पर सुलायेगी. इसके साथ ही वह दुःशासन को संबोधित करते हुए कहता है मैं तेरी पाप सनी बाहें उखाड़ कर रक्त पी लूंगा. तुम्हारे रक्त से द्रौपदी नहाकर फिर वेणी बाँधेगी. इसके उपरान्त युद्ध भूमि में भीम दुःशासन और कुरुराज का वध करते हैं.

उपर्युक्त कथा सूत्र में " महान प्रतिशोध " का शीर्षक द्रौपदी की असहाय दशा की घटना एवं भीम के क्रोध पर आधारित है. एक ही आधिकारिक कथा चलती है. और भीम का प्रतिशोध की मुख्य घटना भी पृष्ठभूमि के रूप में महाभारत के युद्ध की पूर्ववर्ती भूमिका से कथा का आरंभ किया है. घटनाओं के माध्यम से भीम के असामान्य शौर्य का उद्घाटन इसका उद्देश्य प्रतीत होता है. वीरता, धैर्य, साहस से सम्बन्धित उदात्त प्रसंगों ने इसे वीर रसात्मक रचना बना दिया है ।

पूर्वनिर्दिष्ट रचनाओं की भाँति इसमें राष्ट्रीय चेतना का उद्देश्य नहीं दिखाई देता. वीर वृत्ति का उत्तेजक तत्व नैतिकता एवं स्वाभिमान की चेतना है और यही मुख्य घटना को दिशा प्रदान करती है. इस प्रकार यह कविता वीर रस की संक्षिप्त किन्तु सशक्त अभिव्यक्ति को प्रकट करती है. भीम द्वारा कहे गये शब्दों

के माध्यम से कवि ने नाद सौन्दर्य भी उत्पन्न करने का प्रयास किया है. भीम के उद्घोषक शब्द प्रयोग वीर रस के अनुरूप शिल्प पक्ष को उजागर करते हैं.

" सरदार चूड़ावत " नामक कविता में नारी का जो विजयी रूप प्रस्तुत किया गया है, वह पूर्वनिर्दिष्ट रचनाओं से नितान्त भिन्न है. मेवाड़ की बलिदानी परम्परा के स्मरण से प्रारंभ हुई यह रचना देश की स्वातन्त्र्यचेतना की उज्ज्वल ऐतिहासिक गाथाओं को लेकर प्रस्तुत हुई है. इसमें नारी न तो पुरुष के मार्ग में रोड़ा अटकाने वाली बनी और न ही उसकी उदात्तता को विकृत करने वाली ही, प्रत्युत वह क्रांति और शक्ति बनकर पुरुष को उदात्तता प्रदान करती है. वह पुरुष की अंकशायिनी ही नहीं बल्कि उसे वीरत्व की ओर ले जाने वाली चिनगारी बनकर यहाँ प्रस्तुत हुई है. चूड़ावत की नवविवाहिता वधू पति के संदेह कीट को फेंकने के लिए अपना सिर काटकर उपहार में भेजती है और इस प्रकार उसकी देश भक्ति, राज्यभक्ति एवं आत्म शक्ति को भी अडिग बताती है--

" हल्दी का चढ़ा था रंग, जिन पाणि-पल्लव में सुरंग,
उन्हीं अरुण हाथों से लेकर तलवार तीक्ष्ण ! मिली जो
बिदाई में !

रानी ने, उस क्षत्राणी ने,
निज शिर को किया छिन्न,
धड़ से उसे किया भिन्न
दिया उसे हाथ में अनुचर थे साथ में
सो गयी परिणय की इस सुहाग रात में " [4]

कल्याणी का यह उत्सर्ग चूड़ावत के शौर्य और बलिदान की अमर प्रेरणा बनकर उसे विजयी बनाता है--

" वीर सरदार चूड़ावत छिन्न शिर हेर
समझ गये सभी, किया पल-भर कहीं न देर
चला युद्ध करने, क्रुद्ध कर में माला कर,
जाता जिस ओर, प्रलय घटा बन छाता उधर
पाट-पाट भूमि, लक्ष-लक्ष नर मुण्डों से
कोटि मुण्डमाल रणचण्डी के चरणों में
अर्पित समर्पित कर बना वह अजेय, नित्य गेय । " [5]

पूरे काव्य में उत्साह का भाव भी सर्वाधिक दृष्टिगोचर होता है. [6] इसमें नारी चरित्र का उदात्त पक्ष उद्घाटित हुआ है, जो पुरुष में शौर्य और शक्ति का संचार करता है. " सरदार चूड़ावत " में शब्दों के विभिन्न प्रयोग, रचनात्मक-कलात्मकता एवं नाद सौन्दर्य इस कविता की उल्लेखनीय विशेषता है.

" वासवदत्ता " में संग्रहीत आठ आख्यानक रचनाओं में " कर्ण और कुन्ती " सोहनलाल द्विवेदी की एक महत्वपूर्ण रचना है, जिसका आधार " महाभारत " से ग्रहण किया गया है. माता कुन्ती कर्ण का जन्म होते ही मंजूषा में बंद कर उसे जल में प्रवाहित कर देती है जो एक सारथी के घर में पलता है. " कुरुक्षेत्र " के युद्ध के समय पाण्डवों पर मंडराती मौत देखकर कुन्ती कर्ण के पास आकर उसके जन्म की कथा बताकर अनुजों से मिलने की प्रार्थना करती है परन्तु कर्ण अर्जुन को छोड़कर बाकी चारों पाण्डवों को अभयदान देते हैं पर मित्र दुर्योधन को छोड़ने वाली बात को ठुकरा देते हैं.

इस आख्यान में कवि ने भारतीय नैतिकता के उच्चादर्श को दर्शाने एवं कर्ण के युद्धोत्साह के प्रकाशन का प्रयास किया है. कर्तव्याकर्तव्य के विवेक में या भावना और कर्तव्य के संघर्ष में मानव की संभाव्य निर्बलता पर कर्ण की विजय का अपना निजी महत्व

है और कर्ण के साहस का उच्चतम रूप कवि ने दर्शाया है--

" मेरे ही बल पर गरजता है कौरव-दल,
मेरे ही स्कंधों पर है रण का संभार
मेरे ही कर में आज
निर्भर है विजय हार ! " [7]

वह प्राणों की बलि चढ़ाने को तैयार है पर माता की ममता के लिए उसे विश्वासघात स्वीकार नहीं. [8] इसमें मातृप्रेम के साथ-2 वीरता, साहस एवं धैर्य के उदात्त गुणों का सन्निवेश है, जिससे यह वीर काव्य की कोटि में आती है. एक ही आधिकारिक कथा के साथ प्रारंभ होकर कर्ण कुन्ती के वार्तालाप के बाद कथा समाप्त हो जाती है. मैत्री के आदर्श की सफल प्रतिष्ठा इसकी उल्लेखनीय विशेषता है. इसके सम्यक अनुशीलन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यह एक वीर रस की सशक्त रचना है जिसमें युद्ध का प्रत्यक्ष वर्णन न होकर कर्ण का उत्साह एवं ओजपूर्ण वाणी ही दृष्टिगोचर होती है. राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में शुद्धवीर काव्य है या अधिक से अधिक हमें गौरवमय अतीत का दिग्दर्शन कराने वाला काव्य है ।

मूल्यांकन

उपर्युक्त विवरण से प्रकट है कि आख्यान निबद्ध छः रचनाएँ दो प्रकार की हैं. " पेशोला की प्रतिध्वनि " , " प्रलय की छाया ", " नकली किला " राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत वीर काव्य हैं. इन दोनों में ही कवि प्रसाद ने गौरवपूर्ण वीर दृप्त अतीत का शब्द चित्र उपस्थित कर अपने समय की नयी पीढ़ी को जागृति का संदेश दिया है. शेष " महान प्रतिशोध ", , " सरदार चूड़ावत " एवं " कुन्ती एवं कर्ण " तीनों रचनाओं में कवि ने विशुद्ध वीर काव्य

की सशक्त अभिव्यक्ति को प्रस्तुत किया है. भीम और कर्ण जैसे पौराणिक पात्रों के माध्यम से गौरवमय अतीत का दिग्दर्शन कराने वाले जहाँ काव्य है, वहाँ " सरदार चूड़ावत " में नारी के चरित्र के उदात्त पक्ष को उद्घाटित कर कवि ने पुरुषों में शौर्य एवं शक्ति का संचार कराया है. ये सभी रचनायें सांस्कृतिक पुनर्जागरण के प्रतिफलन के रूप में प्रकाश में आयी हैं जो अतीत के प्रति प्रेम की चेतना को प्रकट करती हुई वीर रस की सशक्त अभिव्यक्ति करती हैं.

विचार प्रधान रचनाएँ

पूर्वनिर्दिष्ट पाँच विचार प्रधान रचनाओं में से " शेर सिंह का शस्त्र समर्पण " शीर्षक कविता में रणजीत सिंह की मृत्यु के उपरान्त लालसिंह के विश्वासघात के कारण अमृतसर के निकट चिलियावाला नामक स्थान में अंग्रेजों और सिक्खों के बीच हुए भयानक युद्ध का वर्णन है जिसमें कितने ही अंग्रेज मारे गये- किन्तु विश्वासघाती लालसिंह द्वारा सतलुज का पुल तोड़ दिए जाने पर 18 हजार वीर सिक्खों को आत्म समर्पण करना पड़ा. इन वीरों में से शेर सिंह भी एक था. उसने शक्ति भर युद्ध किया और शत्रुओं के दाँत भी खट्टे किए पर दुर्भाग्य से अंत में विवश होकर उसे भी आत्म समर्पण करना पड़ा. इस आख्यानक कविता में इसी ऐतिहासिक घटना की पृष्ठभूमि पर शस्त्र समर्पित करते समय शेरसिंह की अन्तर्व्यथा का मूर्तिमान स्वरूप अंकित किया गया है. मनोभावों के अनुरूप कहीं ओजपूर्ण उद्गार हैं, तो कहीं क्षोभ, ग्लानि और अन्तर्व्यथा में डूबी हुई वाणी. जब उसे अपने पूर्वजों का गौरव पूर्ण इतिहास, उनकी वीरता, साहस, त्याग और पराक्रम की याद आती है तो उसका स्वर ओजपूर्ण हो उठता है--

" सिक्खों के शौर्य भरे जीवन की संगिनी
कपिशा हुई थी लाल तेरा पानी पान कर
दुर्मद दुरन्त धर्म दस्युओं की त्रासिनी ।
उनके समर वीर कर में तू नाचती
लप- लप करती थी जीभ जैसे यम की । " [9]

और कभी प्रवंचना का कटुफल भोगने वाली सिक्ख जाति के करुण अंत से हृदय कचोट उठता है और उसीके अनुसार उसकी वाणी करुणार्द्र हो उठती है. कभी वह छल प्रपंच भरी विजय से अधिक पराजय को वरेण्य मानता है तो कभी पराजय के प्रति क्षोभ और दुःख उमड़ पड़ता है. कभी अपनी विगत संस्कृति पर उसका मस्तष्क गर्व से तन जाता है तो कभी लालसिंह के कुकृत्य पर उसकी गर्दन शर्म से झुक जाती है. कहीं देश प्रेम और जातीय गौरव के भाव उसके मन में उमड़ते हैं तो कहीं घृणा के. कवि ने शेरसिंह के माध्यम से इन भावों का विवेचन विश्लेषण अति ही मानवीय और मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है.

यह कविता अतुकान्त छन्द में लिखी गयी है, फिरभी उसमें ओज एवं प्रवाह है. प्रसाद जी के अन्य ऐतिहासिक आख्यान काव्यों की ही भाँति प्रस्तुत रचना में भी राष्ट्रीयता, अतीत गौरव और संस्कृति का आख्यान है. एक ओर कवि प्राचीन संस्कृति का जयघोष करता हमारी वीरता, शौर्य और पराक्रम का गुणगान करता है तो दूसरी ओर लालसिंह जैसे देशद्रोही के प्रति घृणा व्यक्त कर देशद्रोहियों और विश्वासघातियों की भर्त्सना करता है. तो तीसरी ओर रणजीत सिंह एवं श्यामसिंह जैसे वीरों का अनुकरण करने की प्रेरणा जगाता है. शेर सिंह के माध्यम से ही अपमानित होने पर शान्त बैठे रहने को अनुचित मानते हुए वह विद्रोही की ज्वाला भी सुलगाना चाहता है.

" शिवाजी का पत्र " निराला जी द्वारा मुक्त छन्द में

लिखी गयी पत्र शैली की एक लम्बी कविता है. सम्पूर्ण कविता में ओजस्विता अपने चरम उत्कर्ष पर विद्यमान है. यदि कहा जाय कि यह पूरी कविता एक तरह से ललकार है तो अतिशयोक्ति न होगी. इस ललकार में क्रोध, आवेश या उत्तेजना नहीं है बल्कि उसमें पौरुष अपनी सम्पूर्ण आस्था के साथ व्यक्त हुआ है. छन्दों के अनुरूप ही इस कविता के कथ्य के ओजस्वी आवेग में भी एक मन्थरता है. ऐसा प्रतीत होता है कि गति की मंद मंथरता कवि ने शायद इसीकारण वश नियोजित की है जिससे पत्र पाने वाले पर एक-एक शब्द की ओजस्विता का गंभीर प्रभाव पड़े. पत्र लेखक शिवाजी भारतीय संस्कृति की सुरक्षा की चिन्ता से ग्रस्त हैं. वे अपनी वीरता, अपने उद्देश्य और हिन्दू जाति में समाविष्ट कमियों से एक साथ परिचित हैं. शिवाजी के लिए भारतीय संस्कृति का अर्थ हिन्दू संस्कृति, सनातन धर्म और हिन्दुत्व है. वे मुगलों को भारतीय संस्कृति का नाशक मानते हुए हिन्दुत्व तथा हिन्दू संस्कृति की सुरक्षा के लिए कटिबद्ध हैं. शिवाजी को यह दुःख साल रहा है कि हिन्दुओं का चारित्रिक उत्कर्ष घटता जा रहा है. जयसिंह जैसे पात्र को सम्बोधित करते हुए निराला उनके अतीत की, उनके क्षत्रित्व, उनकी शूरवीरता की भी याद शिवाजी द्वारा दिलवाते हैं और साथ ही सूक्ष्म व्यंग्य करने से भी नहीं चूकते --

" और है विकर्षणमय सारा संसार हिन्दुओं के लिए।
घेरना है अपनी ही छाया से ! ठगते वे अपने ही भाइयों को ।
लूटकर उन्हें ही वे भरते हैं अपना घर " [10]

एवं,

" फैले समवेदना, एक ओर हिन्दू एक ओर मुसलमान हों,
व्यक्ति का खिंचाव यदि जाति गत हो जाय,
देखो परिणाम फिर, स्थिर न रहेंगे पैर यवनों के -
पस्त हौंसला होगा-ध्वस्त होगा साम्राज्य । " [11]

सांस्कृतिक क्षय की यही चिन्ता " शिवाजी का पत्र " कविता का मुख्य स्वर है. शिवाजी जिस युग में पैदा हुए थे उस युग में संस्कृति का अर्थ उनके लिए हिन्दू संस्कृति या हिन्दुत्व तक ही सीमित हो सकती थी. परन्तु " एक ओर हिन्दू एक ओर मुसलमान हो " की बात आज के धर्म निरपेक्ष हिन्दुस्तान में अजीब सी प्रतीत होती है. ऐसा लगता है कि यहाँ कवि ने मुसलमान शब्द अंग्रेजों के लिए प्रयोग किया है तब यह कवि साम्प्रदायिकता की संकीर्ण भावना से मुक्ति पा सकता है. यह संपूर्ण कविता ही वीरत्व की एक उत्कृष्ट काव्य कृति मानी जा सकती है जिसमें सांस्कृतिक पुनर्जागरण, क्रांति, बलिदान और देश प्रेम की भावना स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है ।

" महाराज पृथ्वीराज का पत्र " मैथिलीशरण गुप्त द्वारा लिखित पत्र शैली की एक लम्बी कविता है. स्वतंत्रता सेनानी महाराणा प्रताप सिंह स्वाधीनता की रक्षा के लिए वन- वन भटकते रहे पर उन्होंने मुगल बादशाह अकबर की अधीनता स्वीकार नहीं की. एक बार कौटुम्बिक विपत्ति के कारण उनका हृदय विचलित हो गया था. इसी कारण वे अकबर से संधि करने का निश्चय करते हैं किन्तु बीकानेर के महाराज पृथ्वीराज का पत्र पाकर वे फिर अपने व्रत पर आरूढ़ हो गये थे. सम्पूर्ण कविता में ओजस्विता अपने चरम उत्कर्ष पर विद्यमान है यदि कहा जाय कि यह पूरी कविता ही एक तरह से ललकार है तो यह अनुचित न होगा. इस ललकार में पौरुष अपनी सम्पूर्ण आस्था के साथ व्यक्त हुआ है. पृथ्वीराज महाराणा प्रताप को सावधान करते हुए कहते हैं कि यदि आपने ही संधि कर ली तो सारी राष्ट्रीयता का नाश हो जायेगा पर दूसरी तरफ अकबर आपको मान देगा पर आप ऐसा न करें क्योंकि .....

" सारे राजा झुके हैं अब अकबर तेज आगे समीत,
ऊँची ग्रीवा किये हैं सतत तब वहाँ आप ही है विनीत ।
आर्यों का मान रक्खा, दुख सहकर भी है प्रतिज्ञा न टाली,
पाया है आपने ही विदित भुवन में नाम आर्याशुमाली ।।
गाते है आपका ही सुयश कवि-कृति छोड़के और गाना ।
वीरों की वीरता को सु-वर मिल गया चेतकारूढ़ राना ।
माँ ! है जैसा प्रताप प्रिय-सुत जन- तू तो मुझे धन्य माने ।
सोता भी चौंकता है अकबर जिससे साँप हो ज्यों सिरहाने ।।[12]

इस प्रकार कवि ने राणा प्रताप को सावधान करते हुए अकबर की अधीनता स्वीकार करने से मना किया है. सांस्कृतिक क्षय की चिन्ता ही इस पत्र द्वारा व्यक्त की गयी है. यह सम्पूर्ण कविता ही वीरत्व की एक उत्कृष्ट काव्य कृति मानी जा सकती है जिसमें सांस्कृतिक पुनर्जागरण क्रांति, बलिदान एवं देश प्रेम की भावना स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है ।

" जागो फिर एक बार " निराला की दो खण्डों में विभक्त लम्बी कविता है जिस में मुक्त आत्मा के स्वर का गंभीर उद्घोष है. निराला मुक्त छन्द में उद्बोधन के गीत गाते हैं. गीता के कर्मयोग एवं वेदांत के पौरुष कर्तव्य का आख्यान यह कविता करती है. प्रथम खण्ड में प्राकृतिक उपादानों से प्रेरित जागरण का मंद उद्घोष है, जिसमें आकाश के टिमटिमाते हुए तारागण और ऊषाकाल की प्रथम किरण तक जागृति को रूपायित किया गया है. द्वितीय खण्ड में गुरु गोबिन्द सिंह द्वारा संचालित मुगलों के साथ संघर्ष का ऐतिहासिक परिवेश प्रकाशित किया गया है.

प्रच्छन्न संकेतात्मक पद्धति पर जागृति का गीत गाकर कवि प्रत्यक्ष भावोत्तेजन और वीर रसात्मक उदात्त काव्य का सृजन करता

है । यहाँ वीरता की विगत स्मृतियों का उल्लेख कर भावोद्दीपन किया गया है और " शेरों की माँद में आया है आज स्यार " से भावों की उत्तेजना तीव्र होती है. यह कार्य अपनी चरम सीमा पर तब पहुँचता है जब सिंह की गोद में शिशु छीनने का उल्लेख कर मेष माता की की दयनीय अवस्था पर एक सहानुभूतिपूर्ण तिरस्कार भी व्यक्त किया गया है ।

इस कविता के प्रथम खण्ड में प्राकृतिक सौन्दर्य के नाना लघु चित्रों से सम्पूर्ण विश्व में जागृति की प्रेरणा का आभास दृष्टिगोचर होता है तो दूसरे खण्ड में विभिन्न ऐतिहासिक घटनाओं एवं सांस्कृतिक उपलब्धियों का उल्लेख कर वीरत्व की व्यंजना की गयी है. जहाँ प्रथम खण्ड में आत्मा की मुक्ति का स्वर है तो द्वितीय भारत की स्वतंत्रता का उद्घोष. यह हिन्दू जागरण की प्रथम अंगड़ाई को भी व्यक्त करती है. राष्ट्र उद्बोधन के लिए " सिंह " और " गोबिन्द सिंह " वीरत्व को उत्तेजित करते हैं --

" समर अमर कर प्राण गान गाए महासिन्धु से
सिन्धु- नद तीर वासी ! सैन्धव तुरंगों पर
चतुरंग चमूसंग,सवा सवा लाख पर
एक को चढ़ाऊँगा
गोबिन्दसिंह निज नाम जब कहाऊँगा । " [13]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारतीय सुप्त मानस को जाग्रत करने के लिए " जागो फिर एक बार " प्रेरणा के रूप में दृष्टिगोचर होती है ।

चीनी आक्रमण की पृष्ठभूमि पर रचित " परशुराम की प्रतीक्षा " विचारोत्तेजना से परिपूर्ण एक सशक्त रचना है. कवि ने इसे पाँच

खण्डों में विभाजित किया है. प्रथम खण्ड में युद्ध की पृष्ठभूमि के रूप में भारतवासियों की अकर्मण्यता को दर्शाया है. [14] द्वितीय खण्ड में कवि ने भारत की दुर्दशा एवं तलवार की महत्ता को दर्शाया है. इसके साथ ही इस युद्ध में हुए हत्या का दोष राजनैतिक नेताओं के कंधों पर डाला है. तृतीय खण्ड में कवि अतीत का गौरवगान करता हुआ भारतवासियों में नवचेतना का संचार करता है और साथ ही उत्साह एवं पौरुष को जगाता है. चतुर्थ खण्ड में भारतभूमि को रौंदने वाले चीनी आक्रमण के विरुद्ध यहाँ की जनता को जाग्रत होते दिखाया गया है. कवि खड्ग को महत्व देता हुआ कहता है कि ऋषियों को भी तप में सिद्धि तभी मिलती है जब पहरे पर धनुर्धर राम खड़े होते हैं. इसके साथ ही वे राष्ट्र के सूत्रोधारों को भीष्म प्रतिज्ञा एवं ज्वलित अंगारमयी भावनाओं से अवगत कराते हैं. [15]

" सूर्य ग्रहण " के कलंकपूर्ण काले धब्बों को मिटाने के लिए दिनकर ने भारत के भाग्य पुरुष प्रतीकात्मक " परशुराम " के एक हाथ में वेद और दूसरे में परशु देकर उन्हें भारत भूमि पर अवतरित किया है ---

" है एक हाथ में परशु, एक मे कुश है,
आ रहा नये भारत का भाग्य पुरुष है । " [16]

अत्याचारी और लोलुप शत्रुओं के संहार के लिए परशुराम का आह्वान उपेक्षित ही नहीं अनिवार्य है. अंतिम पंचम खण्ड अपेक्षाकृत अधिक बड़ा है, जिसमें कवि ने " अनल " [17] की उत्पत्ति, वीरता एवं पौरुष [18] की अनिवार्यता के साथ तलवार की अनिवार्यता को महत्व दिया है ।

सम्पूर्ण रचना के विवेचन के उपरान्त हम यह कह सकते हैं कि

कवि ने एक ऐतिहासिक परशुराम की जिसके विषय में उन्होंने स्वयं " दो शब्द " में कहा है ...

" नेफा युद्ध के प्रसंग में भगवान परशुराम का नाम अत्यन्त समीचीन है. जब परशुराम पर मातृ हत्या का पाप चढ़ा, वे उससे मुक्ति पाने को सभी तीर्थों में घूमते फिरे, किन्तु कहीं भी परशु पर से उनकी वज्रमूठ नहीं खुली यानी उनके मन के पाप का भाव नहीं दूर हुआ. तब पिता ने उनसे कहा कि कैलाश के समीप जो ब्रह्मकुंड है, उसमें स्नान करने से यह पाप छूट जायेगा. निदान, परशुराम हिमालय पर चढ़कर कैलाश पहुँचे और ब्रह्मकुंड में उन्होंने स्नान किया. ब्रह्मकुंड में डुबकी लगाते ही परशु उनके हाथ से छूट कर गिर गया अर्थात् उनका मन पाप- मुक्त हो गया. --- लोहित भारतवर्ष का बड़ा पवित्र भाग है. पुराकाल में वहाँ परशुराम का पाप मोचन हुआ था. आज एक बार फिर लोहित में ही भारतवर्ष का पाप छूटा है. इसलिए भविष्य मुझे आशा से पूर्ण दिखाई देता है। " 19

" दो शब्द " में लिखी यह घटना एवं कवि की भविष्य वाणी सच ही लगती है. तभी तो चीन से पराजय का मुँह देखने के उपरान्त आज भारत ने पाकिस्तान को दो युद्धों में धक्के छुड़ा कर अपने कलंक को धो लिया है. वीरता, साहस, धैर्य आदि के प्रसंगों के कारण यह वीरत्व की कोटि में आ गयी है. दिनकर जी ने इस कृति के माध्यम से नेहरू जी की कड़ी आलोचना की है और साथ ही गांधीवादी अहिंसा की नीति की भी कटु आलोचना करते हुए भारतवासियों को पौरुष पर विश्वास करना सिखाया है. वीर काव्यों की राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि आक्रमण की प्रतिक्रिया में राष्ट्रीय प्रेरणा से उद्दीप्त यह रचना

प्रस्तुत हुई है. " परशुराम की प्रतीक्षा " के विषय में कन्हैयालाल मिश्र " प्रभाकर " का निम्नलिखित कथन--उल्लेखनीय है...

" परशुराम के छन्दों का भाव है जन-जन का, पर प्रभात है कवि का, तो भाव को प्रभाव देकर दिनकर जनमानस के कवि का इतिहास पद पा गये हैं. अब से ठीक 51 वर्ष पूर्व जन-जन की भावना को छंद बद्ध किया था कवि मैथिलीशरण गुप्त ने " भारत-भारती "में. और इतिहास पद पाया था..... आंखे खोलता, अंगड़ाई लेता जन मन भारती है तो आंखे तोरता मुट्ठी बांधता क्रुद्ध जन मन परशुराम की प्रतीक्षा है । " [20]

" बेतवा का सत्याग्रह " युगाधार में संकलित सोहनलाल द्विवेदी जी की यह 22 पृष्ठों की लम्बी कविता है जो किसानों पर होने वाले अत्याचार के विरुद्ध किए गए सत्याग्रह की घटना को लेकर है. सत्याग्रह की प्रेरणा का आधार कुछ जन सेवी कार्यकर्ताओं द्वारा देखे गये तीन किसानों पर किये गये अत्याचार को बनाया गया है. किसानों को मार पीट कर उनके कपड़े उतार लेने वाले घाटिया के विरुद्ध वे लोग जन जागृति करके सत्याग्रह करते हैं और पुलिस द्वारा पकड़े जाते हैं. न्यालय में मुकद्दमा होने पर न्यायाधीश का निर्णय सरकारी व्यवस्था के विरुद्ध होता है और वे मुक्त हो जाते हैं. इसके कवि श्री द्विवेदी जी गांधीवाद के प्रति अनन्य निष्ठावान हैं इसलिए उन्होंने इस शान्तिपूर्ण सत्याग्रह की गौरवगाथा प्रस्तुत करने के साथ-2 घाटिया के हृदय का परिवर्तन भी कराया है जो अंत में उन जन नेताओं से और उनके कहने पर उन किसानों से क्षमा मांगता है. इस प्रसंग पर कवि ने युगाधार महात्मा गांधी का भी स्मरण किया है. इससे स्पष्ट है कि यह कविता वीर काव्य होने के साथ-साथ राष्ट्रीय भावनाओं की पोषक है. इसमें धर्मवीरता को घटनाओं के माध्यम से रूपायित किया गया है. प्रकारान्तर से कवि ने अतीत के

गौरव का भी स्मरण दिलाया है जो राष्ट्रीय काव्य धारा की एक विशेषता है. बुंदेलखण्ड से संबंधित यह घटना होने के कारण वह कवि आल्हा ऊदल का स्मरण करते हुए कहता है--

" आल्हा ऊदल की स्वर्गात्मा भी
तृप्त हुई होगी मन में,
जागे तो अपने कुछ जवान
जीवन तो है कुछ जन जन में । " [21]

शैली की रोचकता के लिए कवि ने गंगा- यमुना के संवाद द्वारा इस घटना की भूमिका प्रस्तुत की है और अंत में इसकी समाप्ति भी गंगा-यमुना के संवाद से होती है. इस संवाद में कवि ने प्रकारान्तर से आधुनिक राष्ट्रीय चेतना, महात्मा गांधी तथा गौरव मय अतीत को प्रसाद गुण युक्त शैली में रखा है. इस संवाद में चुस्ती का अभाव है, व्यर्थ का विस्तार हो गया है और ऐसा प्रतीत होता है कि आरंभिक भूमिका बाहर से जोड़ दी गयी है. कवि ने सत्याग्रहियों के कर्मोत्साह के उद्घाटन तक ही इस कविता को सीमित नहीं रखा अपितु उसका ध्यान जन जागरण पर भी उतना ही गया है. अतः यह कहा जा सकता है कि " बेतवा सत्याग्रह " के माध्यम से कवि समकालीन राष्ट्रीय चेतना को अंकित करना चाहता है ।

भाषा की प्रासादिकता एवं सहज प्रवाहमयता राष्ट्रकवि सोहन लाल द्विवेदी की एक उल्लेखनीय विशेषता है जिसे हम प्रसंगानुसार दृष्टिगत कराते आये हैं. इस कविता में द्विवेदी जी ने स्थानीय बोली के कुछ शब्दों का प्रयोग बड़ी सहजता के साथ किया है जिसे निम्नलिखित उदाहरण में देखा जा सकता है.

" है खिया गया तन नहीं पीटने से
नित खाते मार- सभी ' " [22]

कुल मिलाकर देखा जाय तो इसमें तत्सम और सरल देशज शब्दों का मिश्रण है, परन्तु यह मिश्रण खटकने वाला न बनकर द्विवेदी जी की शैली की एक विशेषता बन गया है ।

उपर्युक्त रचनाओं के विवेचन के निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि इन विचार सूत्र प्रधान रचनाओं में वीर रस वीरोक्तियों के माध्यम से आया है, इनकी दूसरी विशेषता यह है कि दिनकर कृत " परशुराम की प्रतीक्षा " , मैथिलीशरण गुप्त रचित " पृथ्वीराज के पत्र " के अतिरिक्त सभी रचनाएँ मुक्त छंद में रची गयी हैं, तीसरी उल्लेखनीय विशेषता यह कही जा सकती है कि प्रथम चार सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रतिफलन हैं तो पाँचवीं परशुराम की प्रतीक्षा चीन जैसे विदेशी आक्रमण की पृष्ठभूमि पर रची गयी राजनीतिक प्रतिक्रिया से प्रेरित वीर रस की सशक्त कृति हैं, " बेतवा का सत्याग्रह " सत्याग्रही वीरों के कर्मोत्साह का प्रतिफलन है ।

मूल्यांकन

पूर्ववर्ती पृष्ठों में कथा सूत्र तथा विचार सूत्र से निबद्ध रचनाओं से सम्बन्धित विवेचन से प्रकट है कि इतर निबद्ध कविताओं में आने वाली प्रायः सभी रचनायें वीर रस की हैं, आख्यान निबद्ध रचनाओं में जहाँ कथा एवं पात्रों के माध्यम से वीरत्व दर्शाया गया है तो विचार सूत्र प्रधान रचनाओं में वीरोक्तियों के माध्यम से आया है, इन दोनों प्रकार की रचनाओं में इनके रचनाकारों ने गौरवपूर्ण अतीत के प्रति प्रेम की चेतना को प्रकट करने का सफल प्रयास किया है, " पेशोला की प्रतिध्वनि " एवं " प्रलय की छाया " अतुकान्त रचनाएँ हैं तो विचार सूत्र प्रधान रचनाओं में भी " शेर सिंह का शस्त्र समर्पण ", " शिवाजी का पत्र " एवं जागो फिर एक बार " मुक्त छन्द में लिखी गयी रचनाएँ हैं, इन सभी कृतियों

में कवि ने तत्सम प्रधान पदावली का प्रायः सहारा लिया है." पेशोला की प्रतिध्वनि " में जहाँ हिन्दू नारी के आत्म त्याग और बलिदान की गौरव गाथा गायी गयी है, वहाँ " सरदार चूड़ावत " में नारी के उदात्त पक्ष को उद्घाटित किया गया है. इन सभी में उत्साह, ओज, पौरुष से सम्बन्धित उदात्त प्रसंगों की अवतारणा हुई है. " परशुराम की प्रतीक्षा " के अतिरिक्त ये सभी कृतियाँ वीर रस की संक्षिप्त किन्तु सशक्त अभिव्यक्ति का साक्ष्य उपस्थित करती हैं. कर्ण, भीम, गुरु गोबिन्द सिंह, शिवाजी, परशुराम, प्रताप, पद्मिनी, सरदार चूड़ावत आदि पात्रों के माध्यम से वीरत्व की चेतना को उभारा गया है.

एक और उल्लेखनीय तथ्य यह है कि " पेशोला की प्रतिध्वनि " " प्रलय की छाया ", " शिवाजी का पत्र ", " पृथ्वीराज का पत्र " " जागो फिर एक बार " , " शेर सिंह का शस्त्र समर्पण " एवं " परशुराम की प्रतीक्षा " जहाँ राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत वीर रस की रचनाएँ है वहाँ " सरदार चूड़ावत " , " कुन्ती और कर्ण " एवं " महान प्रतिशोध " जैसी रचनाएँ विशुद्ध वीर काव्य हैं जो केवल सांस्कृतिक पुनर्जागरण का ही प्रतिफलन हैं. अतः इस अनुशीलन के आधार पर यह कहा जा सकता है इन निबद्ध कृतियों की विचारभूमि पूर्ववर्ती अध्यायों में विवेचित खण्डकाव्यों की वैचारिक चेतना से बहुत कुछ मिलती- जुलती है, किन्तु इनका शिल्प पक्ष अधिक सुसंगठित एवं नवीन काव्य- चेतना से संपुक्त है ।

संदर्भ सूची

1. जयशंकर प्रसाद : लहर पृ. 4.
2. लहर ‖ प्रलय की छाया ‖ पृ. 64.
3. डा० शान्ति स्वरूप : जयशंकर प्रसाद का कामायनी पूर्व काव्य प्रथम संस्करण 1970, पृ. 188.
4. सोहनलाल द्विवेदी , वासवदत्ता, पृ. 24-25.
5. वही, पृ. 25.
6. वही, पृ. 20.
7. वही ‖ कर्ण और कुन्ती ‖ पृ. 33.
8. वही, पृ. 33.
9. जयशंकर प्रसाद : लहर : शेर सिंह का शस्त्र समर्पण, पृ. 51.
10. आधुनिक वीर काव्य, पृ. 71.
11. वही, पृ. 71.
12. मैथिलीशरण गुप्त, मंगल घट ,पृ. 6.
13. निराला : परिमल : जागो फिर एक बार, पृ. 188.
14. रामधारी सिंह दिनकर : परशुराम की प्रतीक्षा , षष्टम संस्करण 1972. पृ. 1.
15. वही, पृ. 17.
16. वही, पृ. 15.
17. वही, पृ. 24.
18. वही, पृ. 25.
19. वही, दो शब्द.
20. कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर : जागो अब परशुराम : साप्ताहिक हिन्दुस्तान , 14 जुलाई 1963 अंक.
21. सोहनलाल द्विवेदी, युगाधार , पृ. 70.
22. वही, पृ. 81.